जीव अधिकार का दसवाँ कलशा है।

इति विपरीतविमुक्तं रत्नत्रयमनुत्तमं प्रपद्याहम्।
अपुनर्भव-भामिन्यां समुद्भव-मनङ्गशं यामि।।१०।।

यह टीका हो गयी है। इसका वापिस संक्षिप्त में कलश बनाया है। **इस प्रकार, मैं...** स्वयं मुनि अपनी बात करके वस्तु की स्थिति सिद्ध करते हैं। **विपरीतरहित...** अर्थात्? देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा का विकल्प है और पंच महाव्रत का यह जो विकल्प है या शास्त्र के पढ़ने का, जानने का जो विकल्प है, वह सब व्यवहार पुण्यबन्ध का कारण है। उससे रहित। **विपरीतरहित...** अर्थात् व्यवहार के रागरहित जो सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र, वह मोक्ष का मार्ग है। समझ में आया? ऊपर आ गया है।

१. अनुत्तम=जिससे उत्तम कोई दूसरा नहीं है - ऐसा सर्वोत्तम, सर्व श्रेष्ठ।

(विकल्परहित) अनुत्तम रत्नत्रय का आश्रय करके,... जिससे उत्तम कोई दूसरा नहीं है - ऐसा सर्वोत्तम, सर्व श्रेष्ठ। अर्थात् ? आत्मा पूर्ण अखण्ड आनन्दस्वरूप है, उसकी स्व के द्रव्य आश्रय की, स्वसन्मुख होकर निर्विकल्प-विकल्प के भेदरहित, निर्विकल्प श्रद्धा, वीतरागी पर्याय प्रगट करना, इसका नाम सम्यग्दर्शन है। समझ में आया ? वस्तु वीतरागमूर्ति आत्मा है। निर्विकल्प रस चैतन्यघन आत्मा है, उसके अन्तर सन्मुख होकर व्यवहार के विकल्प से रहित ऐसा अनुत्तम सम्यग्दर्शन.. अनुत्तम अर्थात् ? उत्तम में उत्तम, उत्कृष्ट, ऐसा। उससे दूसरा कोई ऊँचा नहीं। आत्मा का ध्रुव चैतन्यस्वभाव अभेद आनन्द की प्रतीति, उसका ज्ञान और उसकी रमणता, ये तीनों निश्चय सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र, वह मोक्ष का मार्ग है। आहा..हा.. ! समझ में आया ?

इससे **विपरीतरहित...** ऐसा कहा है। इसके अर्थ में कितने ही कहते हैं कि विपरीत-मिथ्यादर्शन-मिथ्याज्ञान-मिथ्याचारित्र विपरीत है, उनसे रहित यह - कितने ही ऐसा अर्थ कहते हैं। यहाँ ऐसा अर्थ नहीं है। समझ में आया ? नीचे अर्थ किया है। **विपरीत=विरुद्ध...** है न ? पहले आ गया है न ? वही यहाँ है।**(व्यवहारत्नत्रयरूप विकल्पों को-पराश्रितभावों को छोड़कर, मात्र निर्विकल्प ज्ञानदर्शनचारित्र का ही-शुद्धरत्नत्रय का ही-स्वीकार करने हेतु 'नियम' के साथ 'सार' शब्द जोड़ा है।)** यह कल आ गया है। भगवान आत्मा अभेद चैतन्यध्रुव, उसका सम्यग्दर्शन अर्थात् निर्विकल्प आत्मा के आनन्द के अनुभव में इसकी प्रतीति और उस आत्मा का स्वसंवेदन-स्व-अपना ज्ञान का, सं-प्रत्यक्ष ज्ञान का वेदन, वह ज्ञान और स्वरूप में लीनता, अरागी चारित्र परिणति, वह चारित्र। इनसे उत्तम कोई चीज़ नहीं है। व्यवहाररत्नत्रय है, वह उत्तम नहीं है। सूक्ष्म बात है।

देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा, पंच महाव्रत के विकल्प इत्यादि वह सब दोष भाव है। उस दोष भाव से रहित वस्तु के स्वरूप की श्रद्धा-ज्ञान और अनुभव रमणता, यह एक ही उत्तम है; इससे दूसरा कोई उत्तम नहीं है। ऐसा भगवान आत्मा पूर्ण शुद्ध ध्रुव में से सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की वीतरागी जो दशा (होती है), वही जीव को करनेयोग्य अथवा वह आश्रय करनेयोग्य है। समझ में आया ? आहा..हा.. !

उसे करके **मुक्तिरूपी रमणी से उत्पन्न अनङ्ग सुख को प्राप्त करता हूँ।** मैं तो, ऐसा

कहते हैं। उस मुक्तिरूपी, पूर्ण आनन्द की दशारूपी मुक्ति से उद्भवित **(अनंग; अशरीरी; अतीन्द्रिय;...)** सुख। आत्मा का अतीन्द्रिय सुख जो आत्मा में है, उसे मैं ऐसे रत्नत्रय द्वारा पर्याय में अतीन्द्रिय सुख को मैं प्राप्त करता हूँ, ऐसा कहते हैं। समझ में आया? सब शब्द अटपटे जैसे लगते हैं! अनजाने लोगों को तो यह मार्ग की विधि क्या होगी? मार्ग तो यह है। कभी इसने परिचय में लिया नहीं, सुना नहीं। इसलिए अनुभव में तो आया नहीं। इसलिए इसे लगता है कि यह क्या है? ऐसा कैसा धर्म? पर के त्याग-ग्रहण का विकल्प भी जिसमें नहीं। ऐसा जो आत्मस्वभाव, उसका अन्तर शरण लेकर जो सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र निर्विकल्पदशा (प्रगट होती है), वही कर्तव्य है और वही **आश्रय करके, मुक्तिरूपी रमणी से उत्पन्न अनङ्ग (अशरीरी;...)** शरीररहित दशा—अतीन्द्रिय आनन्द की दशा, उससे प्राप्त होती है। है न? **मनङ्गशं यामि।** ऐसा है न? **समुद्भव-मनङ्गशं** संस्कृत है। **सम** सुख। **(अतीन्द्रिय; आत्मिक) सुख को प्राप्त करता हूँ।** क्योंकि सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र, वह अतीन्द्रिय सुखस्वरूप है। आहा..हा..! समझ में आया? भगवान आत्मा का सम्यग्दर्शन का भाव, सम्यग्ज्ञान का भाव, सम्यक्चारित्र का भाव, वह अतीन्द्रिय आनन्द के सुखरूप भाव है और उसके द्वारा मैं पूर्ण अतीन्द्रिय आनन्द के सुख को प्राप्त करता हूँ, ऐसा कहते हैं। समझ में आया?

यहाँ तो आनन्द को प्राप्त करता हूँ, ऐसा ले लिया है। मुक्ति के सुख को मैं प्राप्त करता हूँ। मार्ग तो मार्ग ऐसा है, भाई! कहते हैं कि जिस मोक्षमार्ग को व्यवहार स्पर्श ही नहीं करता और निश्चयमोक्षमार्ग इस व्यवहार को स्पर्श ही नहीं करता। प्रेमचन्दभाई! ऐसा मार्ग है। आहा..हा..!

ऐसे अतीन्द्रिय आनन्द की दशा। व्यवहाररत्नत्रय तो दुःखरूप भाव है, विकल्प है। आहा..हा..! वह तो शुभभाव है, वह तो कषाय है। बालचन्दजी! शुभभाव। भगवान की भक्ति, भगवान की श्रद्धा, पंच महाव्रत के परिणाम, भगवान णमो अरिहंताणं, णमो अरिहंताणं (करे), वह सब विकल्प, राग, कषाय है क्योंकि परद्रव्य है न? परद्रव्य पर जहाँ लक्ष्य जाता है तो उसे विकल्प आये बिना नहीं रहता। आहा..हा..! समझ में आया?

उसके **मुक्तिरूपी रमणी से उत्पन्न...** उत्पन्न होनेवाले **(अतीन्द्रिय; आत्मिक) सुख को प्राप्त करता हूँ।** मोक्षमार्ग तो यह है। इसके अतिरिक्त सब व्यवहार के कथन

जाननेयोग्य है, आदरनेयोग्य नहीं है। वीतराग स्वयं ऐसा कहते हैं कि हमें मानने से और हमारे सामने देखने से तुझे राग होगा। सुमेरुमलजी! ऐसे विकल्प का आश्रय किये बिना विकल्प को छोड़ देना। भगवान आत्मा अतीन्द्रिय सहज सुख है। उसमें से होनेवाली श्रद्धा, ज्ञान और शान्ति, वह भी अतीन्द्रिय आनन्द के सुखरूप दशा है। अतीन्द्रिय आनन्द का वह मोक्षमार्ग, वह स्वाद है। उससे अतीन्द्रिय पूर्णानन्द की प्राप्ति होती है। बराबर है। आहा..हा..! यह तीन गाथायें हुईं।

गाथा-४

णियमं मोक्खउवाओ तस्स फलं हवदि परमणिव्वाणं।
एदेसिं तिण्हं पि य पत्तेय-परूवणा होई।।४।।

नियमो मोक्षोपायस्तस्य फलं भवति परमनिर्वाणम्।
एतेषां त्रयाणा-मपि च प्रत्येक-प्ररूपणा भवति।।४।।

रत्नत्रयस्य भेदकरणलक्षणकथनमिदम्। मोक्षः साक्षादखिलकर्मप्रध्वञ्सनेनासादितमहा-नन्दलाभः। पूर्वोक्तनिरुपचाररत्नत्रयपरिणतिस्तस्य महानन्दस्योपायः। अपि चैषां ज्ञानदर्शन-चारित्राणां त्रयाणां प्रत्येकप्ररूपणा भवति। कथं, इदं ज्ञानमिदं दर्शनमिदं चारित्रमित्यनेन विकल्पेन। दर्शनज्ञानचारित्राणां लक्षणं वक्ष्यमाणसूत्रेषु ज्ञातव्यं भवति।

है नियम मोक्ष-उपाय, उसका फल परम निर्वाण है।
इन तीन का ही भेद पूर्वक, भिन्न-भिन्न विधान है॥४॥

अन्वयार्थ :—[नियमः] (रत्नत्रयरूप) नियम, [मोक्षोपायः] मोक्ष का उपाय है; [तस्य फलं] उसका फल, [परमनिर्वाणं भवति] परम निर्वाण है। [अपि च] पुनश्च (भेदकथन द्वारा अभेद समझाने के हेतु), [एतेषां त्रयाणां] इन तीनों का [प्रत्येकप्ररूपणा] भेद करके भिन्न-भिन्न निरूपण [भवति] होता है।

टीका :—रत्नत्रय के भेद करने के सम्बन्ध में और उनके लक्षणों के सम्बन्ध में यह कथन है।

समस्त कर्मों के नाश द्वारा साक्षात् प्राप्त किया जानेवाला महा-आनन्द का लाभ, सो मोक्ष है। उस महा-आनन्द का उपाय, पूर्वोक्त निरुपचार रत्नत्रयरूप परिणति है। पुनश्च (निरुपचार रत्नत्रयरूप अभेदपरिणति में अन्तर्भूत रहे हुए), इन तीन का

— ज्ञान-दर्शन और चारित्र का, भिन्न-भिन्न निरूपण होता है। किस प्रकार ? यह ज्ञान है, यह दर्शन है, यह चारित्र है, इस प्रकार भेद करके। (इस शास्त्र में) जो गाथासूत्र आगे कहे जायेंगे, उनमें दर्शन-ज्ञान-चारित्र के लक्षण ज्ञात होंगे।

गाथा-४ पर प्रवचन

चौथी (गाथा)

णियमं मोक्खउवाओ तस्स फलं हवदि परमणिव्वाणं।

लो **परमणिव्वाणं** किसी ने पूछा नहीं था कि यह परम क्या कहा ? परम। परम श्रद्धान। परम श्रद्धान। यह तो निर्मल सम्यग्दर्शन, वह परम श्रद्धान है। यहाँ मोक्ष, वह परम निर्वाण।

णियमं मोक्खउवाओ तस्स फलं हवदि परमणिव्वाणं।
एदेसिं तिण्हं पि य पत्तेय-परूवणा होई।।४।।

नीचे हरिगीत-

है नियम मोक्ष-उपाय, उसका फल परम निर्वाण है।
इन तीन का ही भेद पूर्वक, भिन्न-भिन्न विधान है॥४॥

अन्वयार्थ : — (रत्नत्रयरूप) नियम, मोक्ष का उपाय है;... निश्चय सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र, यह रत्नत्रय मोक्ष का उपाय है। **उसका फल, परम निर्वाण है।** उसका फल मुक्ति है। **पुनश्च...** यह क्यों दिया ? इसका जरा अर्थ किया है। पण्डित ने स्पष्टीकरण किया है। **(भेदकथन द्वारा अभेद समझाने के हेतु),...** ऐसा स्पष्टीकरण किया है। नहीं तो तीन का कथन करूँगा, शब्द तो ऐसे हैं। **इन तीनों का भेद करके भिन्न-भिन्न निरूपण होता है।** ऐसा है न ? परन्तु उसका अर्थ-स्पष्टीकरण किया कि भेद से अभेद समझाने के लिये भेद का कथन करूँगा। समझ में आया ? समयसार ८वीं गाथा की शैली ली है। भेदकथन द्वारा... व्यवहार समकित यह विकल्प है, भेद है। इसके द्वारा यह अभेद चीज़ है, उसे समझने के लिये भेद से कथन करूँगा, ऐसा कहते हैं।

(भेदकथन द्वारा अभेद समझाने के हेतु)... समझाना है तो अखण्ड, अभेद की दृष्टि—ज्ञान और रमणता, परन्तु भेद से-विकल्प से उसे समझाते हैं कि जो यह आत्मा, इसकी श्रद्धा, इसका ज्ञान और रमणता वह मोक्षमार्ग है—ऐसा भेद से समझाते हैं। भेद आदरणीय नहीं है। समझ में आया ? समझानेवाले को भी आदरणीय नहीं और समझनेवाले को भी आदरणीय नहीं, परन्तु भेद द्वारा उसे समझाते हैं कि इस आत्मा का ज्ञान, इस आत्मा का दर्शन और निर्विकल्प चारित्र, वह मोक्ष का मार्ग है। समझ में आया ?

पहले वहाँ तो इनकार किया था कि व्यवहार के परिहार के लिये सार शब्द लगाया है। विपरीत के परिहार के लिये। यहाँ कहते हैं कि विपरीतता भेद पाड़कर किसलिये कहूँगा ? अभेद को समझाने के लिये भेद को कहूँगा, ऐसा कहते हैं। समझ में आया ? व्यवहारसम्यक्त्व और व्यवहारज्ञान और व्यवहारचारित्र, ये सब भेद निश्चय को समझाने के लिये यह निमित्त का कथन है। व्यवहार, व्यवहार को समझाने के लिये नहीं है, ऐसा कहते हैं। (समयसार) ८वीं गाथा में भी ऐसा आता है न ? व्यवहार—दर्शन-ज्ञान-चारित्र को प्राप्त, यह व्यवहार, निश्चय को समझाता है। परमार्थ वस्तु अभेद को समझाता है। व्यवहार, व्यवहार को समझाता है, ऐसा नहीं है। भेद पाड़कर कथन अभेद को समझाता है। अभेद का ज्ञान होने पर भेद क्या है, ऐसा इसे ज्ञान में आ जाता है। भेद का ज्ञान करने के लिये नया प्रयास नहीं है। भेद द्वारा अभेद का भान होने पर, अभेद के ज्ञान में, भेद-विकल्प क्या है ? उसका ज्ञान, वह इसमें नहीं है, ऐसा नास्तिरूप से ज्ञान आ जाता है। आहा..हा..! **इन तीनों का भेद करके भिन्न-भिन्न...** ऐसा है न ? **प्रत्येक...** प्रत्येक का अर्थ भेद पाड़कर। प्रत्येक अर्थात् भिन्न-भिन्न करके। भिन्न निरूपण करूँगा।

***टीका :*—रत्नत्रय के भेद करने के सम्बन्ध में...** आहा..हा..! सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र को व्यवहार से समझाने के लिये **और उनके लक्षणों के सम्बन्ध में यह कथन है।** व्यवहार का लक्षण, हों! व्यवहार के भेद करने के लिये और उनके लक्षण के सम्बन्ध में। उनका अर्थात् व्यवहार का लक्षण क्या है ? इसके लिये यह गाथा है।

समस्त कर्मों के नाश द्वारा साक्षात् प्राप्त किया जानेवाला महा-आनन्द का लाभ, सो मोक्ष है। मोक्ष की व्याख्या। मोक्ष अर्थात् क्या ? वैसे तो मोक्ष अर्थात् छूटना हुआ। **समस्त कर्मों के नाश द्वारा...** मोक्ष तो छूटने के अर्थ में है। सर्व कर्म के नाश से।

वापस अस्ति ली। **साक्षात् प्राप्त किया जानेवाला महा-आनन्द का लाभ,...** अतीन्द्रिय आनन्द भगवान आत्मा है, उसकी अतीन्द्रिय आनन्द की पर्याय में पूर्ण प्राप्ति में इस आनन्द का लाभ, महाअतीन्द्रिय आनन्द का पूर्ण लाभ। **साक्षात् प्राप्त किया जानेवाला...** आहा..हा..! समझ में आया? **महा-आनन्द का लाभ, सो मोक्ष है।** ऐसा अस्ति से सिद्ध किया है। पहली व्याख्या की। मोक्ष शब्द है। समझ में आया? **णियमं मोक्खउवाओ** ऐसा है न? अर्थात् मोक्ष की व्याख्या की। समस्त कर्म के नाश से / छूटना। छूटना- सर्वकर्म से छूटा परन्तु छूटा तब हुआ क्या?

साक्षात् प्राप्त किया जानेवाला महा-आनन्द का लाभ,... अर्थात्? शक्ति में, स्वभाव में तो महाआनन्द था। भगवान आत्मा महा अतीन्द्रिय आनन्दरूप ही है, परन्तु साक्षात् प्राप्त किया जानेवाला-पर्याय में आनन्द प्राप्त होता है, ऐसा कहते हैं। समझ में आया? अरे! ऐसा धर्म! **साक्षात् प्राप्त किया जानेवाला...** प्रगट दशा में प्राप्त होनेवाला **महा-आनन्द का लाभ,...** लो! यह लाभ सवाया। ये बनिया लिखते हैं न? पोपटभाई! लाख सवाया डालते हैं न तुम्हारे? बहियों में और सबमें। दरवाजे में लिखते हैं न? दरवाजे में लिखते हैं। धूल में भी वहाँ लाभ नहीं है। धूल का लाभ वह तो इसे कहाँ आता है? ममता का लाभ है यहाँ। यह तो पूर्ण वीतराग समता के आनन्द का लाभ। समझ में आया? भाषा तो देखो! टीका भी कैसी हुई है!

णियमं मोक्खउवाओ ऐसा कहना है न? **नियम है वह मोक्ष का उपाय है...** तब मोक्ष अर्थात् क्या? ऐसा। नियम (वह) मोक्ष का उपाय है और **उसका फल परम निर्वाण...** मोक्ष अर्थात् क्या? ऐसा। समस्त कर्मों का अभाव होकर, नाश होकर, महा आनन्द का साक्षात् प्राप्त होना (पूर्णानन्द)। अतीन्द्रिय आनन्दस्वरूप तो भगवान आत्मा है ही। उसे पर्याय में प्रत्यक्ष-साक्षात् प्रगट (प्राप्त होनेवाला)। यह साक्षात् भगवान को भेंटा, ऐसा नहीं कहते? आत्मा अतीन्द्रिय आनन्दस्वरूप प्रभु तो अनादि से है। उसे वर्तमान दशा में साक्षात् आनन्द का लाभ। साक्षात् प्राप्त होनेवाला महा आनन्द का लाभ, उसका नाम अस्तिरूप से मुक्ति कहा जाता है। समझ में आया?

श्रीमद् में ऐसा कहा, 'मोक्ष कह्यो निज शुद्धता।' वहाँ यह अस्ति से लिया है। मोक्ष शब्द में छूटना आता है। इसलिए इसमें जरा पहले लिया कि कर्म से, अपूर्ण दशा से छूटने

पर, पूर्णदशा की प्राप्ति, साक्षात् अतीन्द्रिय आनन्द का लाभ (होना), उसे मोक्ष कहा जाता है। यह संसार का लाभ, वह दुःख कहा जाता है, ऐसा कहते हैं। दुःख, चाहे तो राग चाहे जिस प्रकार का हो, परन्तु उस राग का लाभ, वह दुःख का लाभ है। आहा..हा..! आकुलता है। यह तो साक्षात् प्राप्त किया जानेवाला अर्थात् नया प्राप्त होनेवाला, ऐसा कहते हैं न? स्वभाव में तो है, परन्तु पर्याय में प्राप्त होनेवाला। प्राप्त होनेवाला-ऐसा शब्द रखा है न? **महा-नन्दलाभः** ... अरे! इसके घर की बातें भी बड़ी ही आती हैं। समझ में आया?

उस महा-आनन्द का उपाय,... पहली मोक्ष की व्याख्या की। अब **णियमं मोक्खउवाओ** ऐसा शब्द है न? नियम अर्थात् मोक्ष का उपाय। मोक्ष अर्थात् साक्षात् महाआनन्द का प्राप्त होनेवाला लाभ, वह मोक्ष। अब उसका उपाय अर्थात्? **पूर्वोक्त निरुपचार रत्नत्रयरूप परिणति है।** पूर्व कथित निरुपचार-जिसमें उपचार नहीं, वास्तविकता है। समझ में आया? निर-उपचार। उपचार नहीं, निरुपचार। वास्तविक भगवान आत्मा का निश्चय सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, चारित्र वह निरुपचार रत्नत्रय है। जिसमें उपचार नहीं परन्तु वास्तविकता है, यथार्थता है। आहा..हा..! समझ में आया? व्यवहार विकल्प जो मोक्षमार्ग कहा जाता है, वह उपचारिक है, अवास्तविक है, अयथार्थ है। वीतराग का मार्ग, वीतराग-सर्वज्ञ का कहा हुआ अनन्त काल में इसने बराबर सुना नहीं। ऐसे की ऐसी मजदूरी की है। समझ में आया? धर्म के नाम पर मजदूरी (की है)।

पूर्वोक्त निरपेक्ष शुद्ध रत्नत्रय कहा था न? **निरुपचार रत्नत्रयरूप परिणति...** देखा! परिणति अर्थात् पर्याय हुई। निश्चयमोक्षमार्ग आत्मा की निर्दोष, निर्विकारी दशा है। वह गुण नहीं। गुण और द्रव्य तो त्रिकाल अविनाशी होते हैं और मोक्ष का मार्ग तथा मोक्ष वह तो पर्याय है। आहा..हा..! और यह क्या? मोक्ष भी एक परिणति है, पर्याय है; गुण नहीं। ऐसे इस मोक्ष के मार्ग की पर्याय-परिणति, वह अवस्था है, परिणति है। **रत्नत्रयरूप परिणति है...** बहुत से कहते हैं, निश्चय सम्यग्दर्शन तो गुण है, उसे तुम पर्याय कैसे कहते हो? सिद्ध में सम्यग्दर्शन आदि आठ गुण प्रगट हुए, ऐसा कहा है। वह गुण अर्थात् पर्याय। गुण प्रगट होते होंगे? गुण तो त्रिकाल है। समझ में आया? अवगुण-अज्ञान था, उसका नाश होकर गुण प्रगट हुए, ऐसा कहने में आता है। बाकी तो प्रगट हुई है पर्याय। आहा..हा..! अवस्था प्रगट होती है न? या गुण प्रगट होते हैं? गुण तो त्रिकाल हैं। जैसे द्रव्य अनादि-अनन्त अविनाशी है, वैसे अनादि-अनन्त उसके गुण हैं। पर्याय तो नयी

प्रगट होती है। सिद्ध की पर्याय भी सादि-अनन्त है। काल से सरीखी रहे तो। एक-एक समय की अवस्था भिन्न-भिन्न गिनने में आती है। शामिल गिनने में आवे तो सादि-अनन्त, परन्तु वह कोई अनादि-अनन्त नहीं है। अनादि-अनन्त तो आत्मा और अनादि-अनन्त उसके ज्ञान-दर्शन आदि गुण हैं। उसका आश्रय लेकर प्रगट होनेवाली पर्याय, वह परिणति है। कहो, समझ में आया?

तथा **इन तीन का—ज्ञान... पुनश्च (निरुपचार रत्नत्रयरूप अभेदपरिणति में...)** क्या कहते हैं? जो आत्मा का त्रिकाली स्वभाव उसके अवलम्बन से -आश्रय से शक्ति में से प्रगट होनेवाली सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र, ऐसी जो अभेदपरिणति। **(निरुपचार...)** उपचार नहीं, आरोप नहीं; यथार्थ अवस्था। उसमें **(अन्तर्भूत रहे हुए)...** उसमें अन्तर्भूत रहे हुए। यह ज्ञान-दर्शन-चारित्र तीन हैं।

इन तीन का—ज्ञान-दर्शन और चारित्र का, भिन्न-भिन्न निरूपण होता है। अर्थात् भेद से कथन करूँगा। है तो सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र तीन निर्मल (अवस्था), उन तीन में से तीन को बताने के लिये व्यवहार से उनका कथन करेंगे। समझ में आया? उसमें ऐसा आया। तीन आया था न पहले? अपने कहा था। नौवाँ पृष्ठ। बस वह। उन तीन में से प्रत्येक का स्वरूप कहा जाता है। वह अलग और वह अलग। है न यह? इन तीन में से प्रत्येक का स्वरूप कहा जाता है। वहाँ तीन में से प्रत्येक का स्वरूप वह निश्चय है। समझ में आया? उस समय कहा था। यह तो तीन जो आत्मा एकरूप भगवान, उसका अन्तर सम्यक् अनुभव होकर दर्शन, प्रतीति, ज्ञान और रमणता (हुए), उन तीन में से एक-एक को कहूँगा परन्तु वे तीनों निश्चय हैं। एक-एक कहूँगा, वह निश्चय है। उन तीन में से भेद पाड़कर कहूँगा, वह व्यवहार है।

इन तीन का—ज्ञान-दर्शन और चारित्र का, भिन्न-भिन्न निरूपण होता है। अर्थात् भेद से उनका कथन करूँगा कि यह निश्चय सम्यग्दर्शन इसे कहा जाता है। विकल्प से (कहूँगा)। सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र इसे कहा जाता है, यह विकल्प से। आत्मा दर्शन-ज्ञान और चारित्र को प्राप्त हो, वह आत्मा। समझ में आया? आयेगा, कलश में आयेगा। देखो! कि शुद्ध रत्नत्रयात्मक आत्मा है। ऐसा भेद से उसे समझाते हैं कि यह आत्मा शुद्ध रत्नत्रयमय है, ऐसे भेद से समझाना। उसे यहाँ व्यवहार कहने में आता है। भेद,

वह निश्चय को समझाने के लिये कथन है। समझ में आया? अर्थात् ये जो तीन हैं, वे भेद हैं। पहले तीन थे, वह तो निश्चय के तीन भेद थे। उनका भिन्न-भिन्न निरूपण किया है। अर्थात्? कि निश्चय ज्ञान यह है, ऐसा विकल्प से-भेद से समझाऊँगा। निश्चयदर्शन यह है, यह भेद से समझाऊँगा। निश्चयचारित्र यह है, यह भेद से समझाऊँगा। ऐसा है।

इन तीन का—ज्ञान-दर्शन और चारित्र का, भिन्न-भिन्न निरूपण होता है। किस प्रकार? यह ज्ञान है,.... ऐसा। देखो! भेद से कहकर यह अन्तरअनुभव में होनेवाला ज्ञान, वह ज्ञान है, ऐसा भेद से कहने में आता है। ऐसा। **यह दर्शन है, यह चारित्र है, इस प्रकार भेद करके। (इस शास्त्र में) जो गाथासूत्र आगे कहे जायेंगे, उनमें दर्शन-ज्ञान-चारित्र के लक्षण ज्ञात होंगे।** भेद का कथन इसमें और लक्षण बाद में बतायेंगे, ऐसा कहते हैं। पहला कहा था न? कि भेद करने के सम्बन्ध में और उनके लक्षण के सम्बन्ध में। टीका का पहला शब्द था। यह तो अध्यात्म बात है; इसलिए समझने के लिये बहुत (धीरज चाहिए)। आज सेठ नहीं आया। समझ में आया?

यह आत्मा परमेश्वर सर्वज्ञदेव तीर्थंकरदेव परमात्मा ने जो आत्मा कहा, वह आत्मा, अविनाशी है और उसमें ज्ञान-दर्शन आनन्द आदि गुण (हैं, वे) अविनाशी हैं। ऐसे अविनाशी तत्त्व के अन्तर्मुख होकर सम्यग्दर्शन हो, उसे निश्चय सच्चा सम्यग्दर्शन कहते हैं। वह मोक्ष का मार्ग है। व्यवहार से कहूँगा, परन्तु वह व्यवहार मोक्ष का मार्ग नहीं है। आहा..हा..! व्यवहार, निश्चय को समझाने के लिये आता है। समझ में आया? गजब, भाई! ऐसा है। भीखाभाई!

मुमुक्षु : निश्चय को समझाने के लिये आता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : भेद वहाँ आता है। देखो! इसे ज्ञान कहते हैं, इसे दर्शन कहते हैं, इसे चारित्र कहते हैं परन्तु व्यवहार स्वयं वस्तु है, धर्म का कारण है-ऐसा नहीं है। आहा..हा..! भारी कठिन।

भेद करके। इसलिए भाई ने-पण्डितजी ने स्पष्टीकरण किया न उसमें? भेद कथन द्वारा अभेद समझाने के लिये, तीन के भेद कहे जायेंगे। आहा..हा..! गजब! इसमें **जो गाथासूत्र आगे कहे जायेंगे, उनमें दर्शन-ज्ञान-चारित्र के लक्षण ज्ञात होंगे।** आगे पाँच (गाथा) में आयेंगे। दर्शन-ज्ञान-चारित्र का लक्षण क्या?

श्लोक-११

अब, चौथी गाथा की टीका पूर्ण करते हुए श्लोक कहा जाता है —

(मन्दाक्रान्ता)

मोक्षोपायो भवति यमिनां शुद्धरत्नत्रयात्मा।
ह्यात्मा ज्ञानं न पुनरपरं दृष्टिरन्याऽपि नैव।।
शीलं तावन्न भवति परं मोक्षुभिः प्रोक्तमेतद्।
बुद्ध्वा जन्तुर्न पुनरुदरं याति मातुः स भव्यः।।११।।

(वीरछन्द)

शुद्ध रत्नत्रयमय आतम ही, मोक्षमार्ग है मुनिवर को।
ज्ञान न इससे कोई अन्य है, दर्शन भी नहिं अन्य अहो।।
और शील भी अन्य नहीं है, यही कहें अर्हन्त प्रभो।
इसे जानकर पुनः न जननी, उदर बसे वह भव्य अहो॥११॥

श्लोकार्थ :—मुनियों को मोक्ष का उपाय, शुद्धरत्नत्रयात्मक (शुद्धरत्नत्रय-परिणतिरूप परिणमित) आत्मा है। ज्ञान, इससे कोई अन्य नहीं है; दर्शन भी इससे कोई अन्य नहीं है और शील (चारित्र) भी अन्य नहीं है। यह, मोक्ष प्राप्त करनेवालों ने (अरिहन्त भगवन्तों ने) कहा है। इसे जानकर जो जीव पुनः माता के उदर में नहीं आता, वह भव्य है॥११॥

श्लोक-११ पर प्रवचन

अब, चौथी गाथा की टीका पूर्ण करते हुए श्लोक कहा जाता है —

मोक्षोपायो भवति यमिनां शुद्धरत्नत्रयात्मा।
ह्यात्मा ज्ञानं न पुनरपरं दृष्टिरन्याऽपि नैव।।
शीलं तावन्न भवति परं मोक्षुभिः प्रोक्तमेतद्।
बुद्ध्वा जन्तुर्न पुनरुदरं याति मातुः स भव्यः।।११।।

पद्मप्रभमलधारिदेव वनवासी दिगम्बर सन्त थे। सन्त तो वन में रहते थे। कुन्दकुन्द महाराज ने यह नियमसार बनाया, इसे दो हजार वर्ष हुए। पश्चात् ये पद्मप्रभमलधारिदेव लगभग ९०० वर्ष पहले दिगम्बर सन्त वनवासी (मुनि हुए), उन्होंने यह टीका बनायी। इनका बनाया हुआ यह कलश है।

मुनियों को मोक्ष का उपाय, शुद्धरत्नत्रयात्मक आत्मा है। देखो! वापिस उन तीन को अभेद कर दिया। कहते हैं मुनियों को, सच्चे सन्तों को **मोक्ष का उपाय, शुद्धरत्नत्रय...** अर्थात् व्यवहार समकित-ज्ञान-चारित्ररहित, निर्विकल्प परिणति का भाव। आहा..हा..! समझ में आया? सच्चे मुनि होते हैं, उन्हें अन्तर में भगवान पूर्णानन्द प्रभु की श्रद्धा-ज्ञान और चारित्र की परिणति अवस्था से परिणमित आत्मा वह मोक्ष का कारण है, ऐसा कहते हैं। चन्दुभाई! मोक्ष की पर्याय से लिया था न? यहाँ तो आत्मा अभेद से लिया है। आहा..हा..!

देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा का विकल्प जो व्यवहार है, शास्त्र का ज्ञान / विकल्प, वह तो राग है; वह मोक्षमार्ग नहीं है तथा पंच महाव्रत के विकल्प, वह राग है; मोक्षमार्ग नहीं है। मोक्षमार्ग तो मुनियों का उसे कहा जाता है कि जिन्हें अन्तर स्वरूप में पूर्णानन्द का प्रभु आत्मा वस्तु प्राप्त है। उसकी अन्तर में उसका ज्ञान होकर, प्रतीति होना और उसका ज्ञान में वेदन होना और उसमें रमणता होना। इन तीन से परिणत आत्मा, वह मुक्ति का कारण है। ऐसा क्यों लिया? कि व्यवहार का विकल्प, वह आत्मा नहीं है, वह अनात्मा है। समझ में आया? अनात्मा, मोक्ष का कारण नहीं हो सकता। समझ में आया? मार्ग गजब, भाई! ऐसा। व्यवहार की तो यहाँ कुछ गिनते ही नहीं है... भाई!

कहते हैं कि मुनियों, सच्चे सन्त जो हैं, उन्हें तो अन्तर में आनन्द की दशा का भान होकर प्रतीति हुई है, अन्तर निर्विकल्प ज्ञान हुआ है और निर्विकल्प चारित्र होता है। उन तीन से परिणमित आत्मा, वह मोक्ष का उपाय है। ऐसा कहना है न यहाँ? उन तीन को उपाय कहकर मोक्ष के उपाय को आत्मा कहा। देखो! **मुनियों को मोक्ष का उपाय, शुद्धरत्नत्रयात्मक (शुद्धरत्नत्रय-परिणतिरूप परिणमित) आत्मा है।** आहा..हा..! कहो, समझ में आया? अपना स्वभाव ही आनन्द और शान्त है, वीतराग है। वह आत्मा परिणम गया है, ऐसा कहते हैं। कहो, समझ में आया? भाषा ही कैसी इस प्रकार की? अनजाने लोगों को अटपटा जैसा लगता है। इसकी अपेक्षा कोई व्रत पालना, अपवास करना, भक्ति

करना, यात्रा करना,... लो! ऐसा शीघ्र समझ में आये। कहते हैं यह तो शुभराग पुण्य है; यह धर्म नहीं। सुन न! समझ में आया? इसका अभाव होकर आत्मा में आत्मा का अनुभव-दृष्टि-ज्ञानरूप परिणमे, ऐसे आत्मा को मोक्ष का उपाय कहते हैं, ऐसा कहते हैं। आहा..हा..!

पहले मोक्ष की व्याख्या की थी न? मोक्ष का उपाय तो यह कहा था। महा आनन्द का उपाय निरुपचार परिणति कही थी। लो, यहाँ वापस कहा, इन तीन से परिणमित आत्मा। अलग-अलग है। शरीर, वाणी, मन तो जड़ कहीं रह गये। कर्म-वर्म कहीं रह गये और दया, दान और व्रत भक्ति के परिणाम कहीं रह गये। वह तो राग, विकार, विभाव है। आहा..हा..! अब यहाँ तो आत्मा पूर्णानन्द का नाथ प्रभु स्वयं है। उसका जो सम्यग्दर्शन, उस ओर की सन्मुख की निर्विकल्प वीतरागीदशा, वीतरागी ज्ञान और वीतरागी चारित्र, यह स्वयं मोक्ष का उपाय न कहकर, तीन रूप से परिणमित आत्मा मोक्ष का उपाय है। भाई! आहा..हा..! देखो न!

मुमुक्षु : द्रव्यसंग्रह में भी ऐसा कहा है।

पूज्य गुरुदेवश्री : ऐसा कहा है, खबर है न? इन तीन का अभेद गिनना, कहा है न? खबर है। पहले शुरुआत में। तीन का अभेदपना, वह मोक्ष का उपाय है। आत्मा वह स्वयं अभेदरूप से परिणम गया, वह आत्मा मोक्ष का उपाय है। कहो, समझ में आया? यह परिणत है, उसका आत्मा। व्यवहार के विकल्प से आत्मा (परिणत)। नहीं। वह तो अनात्मा है। बहुत कठिन काम है। वीतराग का दर्शन, इसे प्राप्त करना अलौकिक बात है। अन्दर से, हों! बाहर वाड़ा से नहीं। आहा..हा..!

ज्ञान, इससे कोई अन्य नहीं है;... अर्थात् आत्मा वस्तु भगवान शुद्ध चैतन्य, पुण्य-पाप के रागरहित—ऐसे आत्मा का ज्ञान, वह ज्ञान आत्मा से कोई अलग नहीं है। यह **ज्ञान, इससे कोई अन्य नहीं है;...** आत्मा ज्ञानरूप परिणमा, वह ज्ञान। वह ज्ञान आत्मा से भिन्न नहीं है। आहा..हा..! समझ में आया? देखो! यहाँ ज्ञान से पहले लिया, पाठ में से लिया है न? पहले ज्ञान, फिर दर्शन, फिर चारित्र, ऐसा लिया है। समझ में आया? कुन्दकुन्दाचार्य ने पाठ में लिया है। यह तो धीरे से समझने की अन्तर की बात है, भाई! यह कहीं पुस्तकें पढ़ जाये, वाँच ले, वार्ता कर जाये, (ऐसी बात नहीं है)। वाद-विवाद करे कि इसमें ऐसा है, बापू! वह बात यहाँ नहीं है।

भगवान आत्मा अपने स्वभाव से भरपूर प्रभु में अन्तर्मुख होकर श्रद्धा-ज्ञान और चारित्र (हुए), वह मोक्ष का उपाय कहा था। कहते हैं कि तीन रूप परिणमित आत्मा, मोक्ष का उपाय है क्योंकि आत्मा से कहीं दर्शन-ज्ञान भिन्न नहीं है, ऐसा कहते हैं। समझ में आया? क्योंकि मोक्ष का उपाय ज्ञान-दर्शन-चारित्र और उन ज्ञान-दर्शन-चारित्र से परिणत आत्मा है। अर्थात् आत्मा से ज्ञान-दर्शन-चारित्र कहीं भिन्न नहीं है। व्यवहार ज्ञान, वह तो आत्मा से भिन्न चीज़ है। पंच महाव्रत के परिणाम, व्यवहार ज्ञान, व्यवहार देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा का विकल्प वह तो आत्मा से भिन्न चीज़ है। समझ में आया? सूक्ष्म बात जँचती है न, सुमेरुमलजी! बात तो यह है। यही बात है। किसी को ऐसा लगे कि परन्तु ऐसा एक निश्चय-निश्चय? सच्चा.. सच्चा.. सच्चा.. कोई खोटा नहीं, ऐ नवरंगभाई! यह तो सच्ची बात है।

कहते हैं कि सच्चे सन्त वनवासी होते हैं। (उन्हें) बाह्य में तो नग्नदशा होती है। अन्तर में उन्हें ऐसी दशा हो (अर्थात्) स्वभाव के आश्रय से दर्शन-ज्ञान-चारित्र (प्रगट हुए हों) तो वह आत्मा ही मोक्ष का उपाय है। बाहर की क्रिया, शरीर की क्रिया और विकल्प, वे कहीं मोक्ष का उपाय नहीं हैं क्योंकि आत्मा उस रूप से नहीं होता। आत्मा उनरूप नहीं होता, वह मोक्ष का कारण नहीं हो सकता, ऐसा कहते हैं। समझ में आया? निरंजनभाई! मार्ग बहुत अलग। वीतराग का मार्ग लोगों को मिलता नहीं, हों! सुनने को मिलता नहीं, इसलिए कहीं के कहीं अटककर जिन्दगी चली जाती है। आहा..हा..!

कहते हैं, आत्मा स्वयं ही मोक्ष का उपाय है। आहा..हा..! क्योंकि वह ज्ञान जो सम्यग्ज्ञान-स्वसंवेदनज्ञान—आत्मा का ज्ञान, वह ज्ञान कहीं आत्मा से पृथक् नहीं है। समझ में आया? **दर्शन भी इससे कोई अन्य नहीं है...** लो! यह और 'ही' आया वापस। कहो, समझ में आया? सम्यग्दर्शन भी आत्मा के निर्विकल्प श्रद्धा की परिणति, वह आत्मा है। आत्मा से कहीं सम्यग्दर्शन भिन्न चीज़ नहीं है। आहा..हा..! **और शील (चारित्र) भी अन्य नहीं है।** चारित्र भी दूसरा नहीं है। देह की क्रिया या पंच महाव्रत का विकल्प, वह चारित्र नहीं है। चारित्र तो आत्मा है। स्वरूप की, आनन्द की लीनतारूप परिणमित आत्मा, वह चारित्र है, उससे कोई चारित्र भिन्न चीज़ नहीं है।

यह, मोक्ष प्राप्त करनेवालों ने (अरिहन्त भगवन्तों ने) कहा है। ऐसा किसने

कहा ? **मोक्ष प्राप्त करनेवालों ने (अरिहन्त भगवन्तों ने)...** इसमें अरिहन्त आया। टोडरमलजी में पहले अरहन्ता लिया है, हों ! शुरुआत में पाँच णमोकार लिया है न ? णमो अरहंताणं लिया है। णमो अरिहंताणं नहीं लिया। अर्थ में वापस अरिहंताणं किया है। टोडरमलजी ने शुरुआत में पहले नवकार लिया है न, वहाँ। णमो अरहंताणं, ऐसा लिया है। अर्थ में णमो अरिहंताणं किया है। पाठ ऐसा लिया। पाठ णमो अरिहंताणं नहीं लिया।

यह, मोक्ष प्राप्त करनेवालों ने (अरिहन्त भगवन्तों ने) कहा है। किसी के घर की बात नहीं है। परमात्मा त्रिलोकनाथ वीतरागदेव ने कहा है। **इसे जानकर जो जीव पुनः माता के उदर में नहीं आता, वह भव्य है।** आहा..हा.. ! मोक्ष की बात है न ? मोक्ष हुआ, उसे फिर से अवतार नहीं होता। आहा..हा.. ! ऐसे सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप परिणमकर आत्मा मोक्ष को प्राप्त करता है, वह फिर से माता के उदर में नहीं आता, उसे फिर से अवतार नहीं होता। उसे यहाँ भव्य जीव को, मोक्ष के मार्गरूप परिणमित को मोक्ष का उपाय कहा गया है।

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव !)